3.3.7
3.3.3(2)
XXII

ISSN : 2347–4041
UGC Approved No. 41232
Impact Factor 3.245
संस्कार चेतना अन्तरराष्ट्रीय मूल्यांकित शोध पत्रिका
वर्ष 8, अंक 7, मार्च 2019

श्रीमद्भगवद्गीता में जीवन का सकारात्मक दृष्टिकोण

डॉ० विदुषा
राजकीय महिला महाविद्यालय
करनाल (हरियाणा)

जगद्गुरु भगवान् श्रीकृष्ण का विश्व को अमूल्य उपहार है । श्रीमद्भगवद्गीता । जिस प्रकार लोक में दृष्टिसम्पन्न प्राणी के लिए सूर्य की महत्ता का प्रमाण अनपेक्षित है उसी प्रकार विवेकसम्पन्न मनुष्य को श्रीमद्भगवद्गीता का महात्म्य सहज बोधगम्य है । जिस प्रकार सन्तान के जन्म लेने पर माता-पिता उसके पालन-पोषण तथा उसे सुयोग्य सच्चरित्र एवं सुशिक्षित बनाने हेतु दायित्वबद्ध अथवा उत्तरदायी हो जाते हैं, उसी प्रकार मानव देह को प्राप्त करने पर मानवोचित धर्म एवं कर्तव्यों का निर्वाह मानव का सहज दायित्व हो जाता है । श्रीकृष्ण के मुख कमल से निस्सृत उपदेशवाक्य विशुद्ध मानवधर्म शास्त्र हैं । श्रीमद्भगवद्गीता का यह वैशिष्ट्य है कि इसके वक्ता, विषय एवं उद्देश्य तीनों ही स्वयं भगवान् हैं । इससे परे प्रमाणिकता की कोई परिधि नहीं । योगेश्वर श्रीकृष्ण स्वयं अपने जीवन में सदाचरण के आदर्श स्थापित कर प्राणिमात्र के समक्ष एक सुख एवं आनन्दमय जीवन जीने का आदर्श समुपस्थापित करते हैं ।

कुरुक्षेत्र रणभूमि में दोनों पक्षों में स्वजनों एवं सम्बन्धियों को युद्धार्थ समुद्यत देखकर विषादग्रस्त अर्जुन अपने परमसखा श्रीकृष्ण के समक्ष अपने मनोभावों को रखता है । युद्ध जैसी विषम परिस्थिति में अर्जुन की मोहग्रस्त मनोदशा को जानकर वे अति सहजभाव से मुस्कुराते हुए अर्जुन से बोले -

"तमुवाच हृषीकेशः प्रहसन्निव भारत ।
सेनयोरुभयोर्मध्ये विषीदन्तमिदं वचः ॥[1]

श्रीकृष्ण अर्जुन को समझाते हैं कि मनुष्य यदि तथ्य पर भली-भाँति विचार करे तो किसी भी परिस्थिति में दुःखी होने अथवा शोक करने का कोई भी कारण नहीं है । तद्यथा-

अशोच्यानन्वशोचस्त्वं प्रज्ञावादांश्च भाषसे ।
गतासूनगतासूंश्च नानुशोचन्ति पण्डिताः ॥[2]

तथा

अव्यक्तोऽयमचिन्त्योऽयमविकार्योऽयमुच्यते ।
तस्मादेवं विदित्वैनं नानुशोचितुमर्हसि ॥
अथ चैनं नित्यजातं नित्यं वा मन्यसे मृतम् ।
तथापि त्वं महाबाहो नानुशोचितुमर्हसि ॥
जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृतस्य च ।
तस्मादपरिहार्येऽर्थे न त्वं शोचितुमर्हसि ॥
अव्यक्तादीनि भूतानि व्यक्तमध्यानि भारत ।
अव्यक्त निधनान्येव तत्र का परिदेवना ॥[3]

'नानुशोचितुमर्हसि', 'तत्र का परिदेवना' प्रभृति वचनों के द्वारा